28/04/01
भजनाश्रम
अमरकंटक

आयुष्मन्त, प्रवीण

अभ्युदय स्मरण

आपका पत्र 21/04/01 का लिखा हुआ परसों के दिन साधन ने पढ़कर सुनाया। पत्र का मूल वस्तु आशय के रूप में समझ में आया। आशय ये रहा कि मध्यस्थ दर्शन सह-अस्तित्ववाद सहज में से कुछ मुद्दे समझ में आया है कुछ नहीं आया है। साथ में यह भी समझ में आया है कि मध्यस्थ दर्शन में कोई प्रयोजित भाषा शैली अपने में दुरूह होने का ध्वनि सुनने को मिली।

आपके पत्र में जो प्रश्न लिखे हैं पहले जो मुद्दे थे उसी के जैसा कुछ प्रश्न भाषा इसलिये आपके पत्र को लौटा नहीं रहे हैं। आपके प्रश्नों को आपकी भाषा में अवलोकित करते हुये लिखा गया है। यदि आप अपने पत्र को बुलाना ही चाहेंगे तो इसका फोटो कापी भेज देंगे। जिससे आपने क्या पूछा था मैंने क्या लिखा था शोध करने वालों को उपयोगी सिद्ध हो सकेगा।

आपका पहला प्रश्न।

प्र1- चैतन्य पद प्रतिष्ठा क्या है?

उत्तर - जो मध्यस्थ दर्शन में कई प्रकार से लिखी हुयी है के अनुसार आपको स्पष्ट करने की विधि से

उत्तर 1- जड़ प्रकृति परिणामशील है हर परिणाम पद अपने में एक यथा स्थिति एवं व्यवस्था है।

गठनपूर्ण परमाणु के रूप में परमाणु संक्रमित हुआ रहता है इसे हम चैतन्य पद कह रहे हैं। इसके साथ जो प्रतिष्ठा जुड़ी हुयी है चैतन्य पद के अक्षुण्णता के अर्थ में है। एक बार परमाणु चैतन्य पद में संक्रमित होता है उसके विपरीत जड़ पद में वापस लौटता नहीं। यह भी स्पष्ट की गयी है कि चैतन्य इकाई भार बंधन एवं अणु बंधन से मुक्त रहता है जीने की आशा। एक कार्य गति पथ को प्रभाव क्षेत्र के रूप में स्थापित करने उस आकार का प्राणकोशाओं से रचित शरीर रसायनिक भौतिक वस्तुओं के योगफल में सम्पन्न रहना आज भी वर्तमान है। चैतन्य इकाई अपने स्वयं स्फूर्त प्रभाव क्षेत्र तथी आकार अथवा कार्य गति पथ रूपी आकार के अनुरूप शरीर को पाकर जीना मान लेता है ऐसा जीवन जब शरीर को छोड़ देता है तो ~~शरीर को जीवन मानकर~~ स्वयं को भ्रमवश मरा मान लेता है।

मधीभ्रम का स्वरूप है शनैः शनैः मानव परम्परा में आशाबंधन से विचार बंधन विचार बंधन से इच्छा बन्धन होना आंकलित होता है। इससे मुक्ति पाना ही भ्रम बन्धन का मुक्ति है। इसीलिए जीवन में से के लिये जीवन ज्ञान की आवश्यकता महसूस की गयी। चैतन्य संसार को अध्ययन गम्य बोध गम्य कराने के क्रम में चैतन्य पद एवं प्रतिष्ठा को सूत्रित व्याख्यायित किया है।

आपके प्रश्न नं० २ - परावर्तन एवं प्रत्यावर्तन को ठीक से परिभाषित करें और जीवन के संदर्भ में समझाए ?

उत्तर - जीवन गति का नाम परावर्तन यह अपने प्रभाव क्षेत्र व्यापी फल परिणामों को आंकलित करता है और स्वीकारता है यही परावर्तन है। इसे प्रत्येक व्यक्ति सदा-सदा करते ही रहता है। इसे आप भी निरीक्षण परीक्षण कर सकते हैं।

परावर्तन प्रत्यावर्तन क्रिया सहज विधि से मानव अध्ययन शोध और अनुसंधान करने में सफल होते आया है। कुछ भागों में सफल होना शेष भी है। जैसा संवेदनशीलता के लिये अनुकूलता ऐसे अनुकूलता प्रतिष्ठित अथवा प्रमाणित करने के लिये अध्ययन सुलभ हुआ है यह सब आहार आवास अलंकार सम्बन्धी वस्तुओं को और दूर गमन दूर श्रवण दूरदर्शन सम्बन्धी वस्तुओं को प्राप्त किया की सीमा में इस्टरूप है। यह सब मनाकार को साकार करने के सार्थकता में है।

मनःस्वस्थता को प्रमाणित करने को रिक्त रहने के आधार पर संज्ञानशीलता के लिये आवश्यकीय अध्ययन को सहअस्तित्व रूपी अस्तित्व ज्ञान, चैतन्य इकाई रूपी जीवन ज्ञान न्याय धर्म सत्य रूपी व्यवहार मूल्यों के आधार पर मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान के संदर्भ में मध्यस्थ दर्शन प्रस्तुत हुआ। यह संज्ञानशीलता का सूचक है इसे प्रत्येक व्यक्ति अध्ययन करना ही होगा।

<u>प्रश्न नं० ३</u> - "जीवनी क्रम जीवों में वंशानुषंगीय स्वीकृति के रूप में देखने को मिलता है। यही आशा बंधन का कार्यकलाप है।" उपरोक्त को समझाइए? आशा बंधन, विचार बंधन, और इच्छा बंधन को ठीक से समझाए।

उत्तर - जीव संसार में जीवनी क्रम ही वंशानुषंगीय विधि से प्रमाणित होना स्पष्ट किया उसकी अक्षुण्णता के आधार पर। क्योंकि विचार एवं इच्छा बंधन का प्रकाशन

जीत संसार में नही होपायी और कल्पनाशीलता एवं कर्म स्वतन्त्रता भी व्यक्त नही हो पायी। यह आदि मानव से अत्याधुनिक मानव तक प्रकाशित नही होपायी। विचार एवं इच्छा के अनुरूप में कल्पनाशीलता कर्मस्वतन्त्रता के चलते प्रयोग एवं कर्माभ्यास के परंपरा के आधार पर मनाकार को साकार करने में साधक हो चुके हैं यही कल्पनाशीलता एवं कर्मस्वतन्त्रता का आधार है। यह स्पष्ट होगया कि आशा बंधन हर जीवो में जीने की आशा के रूप में दृष्टव्य है। और मानव में आशा, विचार एवं इच्छा बन्धन के आधार पर ही संवेदन शीलता का सुख भासते हुये निरंतर न होपाना मानव ने पहचाना इसकी निरन्तरता की अपेक्षा हर मानव में बना रहा अथवा सर्वाधिक मानव में बना रहा इसके लिये शोध एवं अनुसंधान का दरवाजा सह-अस्तित्व रूपी अस्तित्व में बना रहा।

प्रश्न नं. ५- "न्याय, धर्म, सत्य की दृष्टि का चिन्तन में साक्षात्कार होना" इसका क्या मतलब है? साक्षात्कार का प्रमाण अनुभव कैसा है? कैसे पता लगे की होगया है या नही?

आप लिखते हैं: पहले चिन्तन में साक्षात्कार, बुद्धि मे बोध और स्वीकृति, आत्मा में अनुभव और बोध तथा साक्षात्कार की पुष्टि: यह पुष्टि कैसी है? पता कैसे चले की हम कहाँ हैं?

उत्तर- संवेदन शीलता का ध्रुव बिन्दु प्रिय हित लाभ होना स्पष्ट किया जा चुका है। संज्ञानीयता का ध्रुव बिन्दु न्याय धर्म सत्य है। न्याय को मानव सम्बन्धों एवं नैसर्गिक संबंधो का पहचान, मूल्यांकन, निर्वाह एवं उभय तृप्ति को अध्ययन गम्य विधि से प्रस्तुत किया है।

सर्वतोमुखी समाधान के रूप में मानव धर्म को प्रतिपादित करते हुये समाधान = सुख समस्या = दुःख सूत्र को व्याख्यायित किया है जैसे हर बुद्धिमान व्यक्ति मूल्यांकित कर सकता है। एवं परस्पर तृप्ति एवं संतुलन को पा सकता है। मानव परंपरा में तृप्ति एवं नैसर्गिक संबंधो में संतुलन का प्रमाण है।

सह-अस्तित्व रूपी परम सत्य को ~~अब~~ सार्वभौम व्यवस्था में जीते हुये प्रतिपादित है इसी क्रम में मानवीयता पूर्ण आचरण स्पष्ट हुयी है। इसी के साथ यह भी समझाया है कि सह-अस्तित्व रूपी अस्तित्व में संपूर्ण इकाईयाँ

अपने २ त्व सहित व्यवस्था और समग्र व्यवस्था की भागीदारी कैसे हुये स्पष्ट है। हर वस्तु का आचरण ही त्व का प्रमाण है यह भी स्पष्ट हो चुकी है। अतएव मानव मानवत्व सहित परिवार व्यवस्था में प्रमाणित होना एवं समग्र व्यवस्था में भागीदारी करना ही सर्वशुभ का मार्ग है

साक्षात्कार विधि से अध्ययन को इस ढंग से प्रस्तुत किया है कि अध्ययन करते समय न्याय धर्म सत्य का आभास शब्द संसार में ही होना पाया जाता है क्यों कि हर मानव हर शब्द का कुछ न कुछ अर्थ को प्रतिपादन करने के क्रम में है इसके स्थान पर निश्चित अर्थ प्रतीत हो जाता है तुरन्त ही अर्थ से इंगित वस्तु सह-अस्तित्व में होने के आधार पर साक्षात्कार नाम दिया है।

साक्षात्कार का तात्पर्य अर्थ से इंगित वस्तु अस्तित्व में होना स्पष्ट किया है। यह स्वीकार हो जाना ही सर्वदा के लिये बोध कार्य है।

यह बोध का वैभव प्रमाणित होने के रूप में संकल्प होना भी एक जीवन प्रक्रिया है। ऐसी स्थिति होते ही अस्तित्व में अनुभव आत्मा में होना पाया जाता है। ऐसे अनुभव ही प्रमाण होना पुनश्च ऐसे प्रमाण का बोध होना फलस्वरूप संकल्प होना।

और पुनश्च अनुभव का साक्षात्कार होना फलस्वरूप परावर्तन क्रम में अनुभव मूलक विधि से चिंतन प्रतिपादित होना यही क्रम अनुभव मूलक विधि से तुलन विश्लेषण तुलन कार्य प्रतिपादित होते देखा गया (समझा गया) है। इन्हीं वैभव मूल्यों के आस्वादन सहित चयन व्यवहार उत्पादन कार्य संपादित होना अनुभव किया है। व्यवहार कार्यों में न्याय समाधान प्रमाणित होना अध्ययन कार्य में अनुभव प्रमाणित होना ही मानव का अनुभव का मूल्यांकन है। इसी के साथ स्थितियाँ दृष्टिगोचर होता है।

प्रश्न 5 - निरीक्षण, परीक्षण, सर्वेक्षण शब्दों में भेद करें।

उत्तर - निरीक्षण क्रिया में रूप गुण स्वभाव धर्म का पहचान होना सार्थक है। परीक्षण में प्रयोजन मूल्य, उपयोग, सदुपयोग का पहचान होना स्पष्ट हुआ। सर्वेक्षण सर्वविदित है कि मात्रा एवं विस्तार से संबंधित आँकलन है।

प्रश्न 6 - न्याय, धर्म, सत्य। क्या इनके अनुभव में क्रम है? यदि है तो क्यों?
तीनों को परिभाषित करें एवं समझाएं।

उत्तर - परिणाम का अमरत्व, श्रम का विश्राम गति का गंतव्य ही विकास एवं जागृति

प्रमाणित करने के क्रम में क्रम है। अनुभव करने में संयुक्त है

का मूल सूत्र है। इनकी व्याख्या को परिभाषित करते हुये सह अस्तित्व सहज नियति विधि से विकास का पहला चरण को चैतन्य इकाई के रूप में स्पष्ट की गयी है। दूसरा श्रम का विश्राम स्थिति को मानव के मानवत्व के रूप में स्पष्ट किया है। मानवत्व अपने में मानव का परिभाषा समझदारी और मानवीयता पूर्ण आचरण का संयुक्त अभिव्यक्ति है जो व्यवस्था के रूप में ही प्रमाणित होती है। तीसरा गति के गंतव्य को स्वतन्त्रता पूर्वक परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था में भागीदारी के रूप में प्रतिपादित किया है इसे आप कई प्रकार अवगाहन से लेकर आश्वस्त होंगे ऐसा मेरा विश्वास है

प्रश्न- 7 - "जीवन भी सहज (अस्तित्व) वस्तु है।" इसमे सहज शब्द बडी सहजता से इस्तेमाल करते हैं। इसका कोई खास मतलब होता है या नही।

उत्तर- सहजता का मतलब जब स्त्रीलिंग और पुरुषलिंग आदि सार्थक नही होता है वहाँ सहज शब्द का प्रयोग होता है। मेरा सुझाव है आप भी इसे अभ्यास करें उत्तम रहेगा जैसा न्याय धर्म सत्य पुरुष वाचिता अथवा लिंग। वाचिता से अछूता है इसके साथ सहज शब्द लगता पाया जाता है।

प्रश्न- 8 - गणितात्मक भाषा
गुणात्मक भाषा
कारणात्मक भाषा } उदाहरण लेकर स्पष्ट करें

उत्तर. 1- गणितात्मक भाषा 1-2-3-4... आदि जोड़ना घटाना, गणना किया है।

2- गुणात्मक भाषा सम विषम मध्यस्थ क्रियाएं और गति।

3. कारणात्मक भाषा सह. अस्तित्व नित्य वर्तमान
सह-अस्तित्व नित्य प्रभावी
सह- अस्तित्व से विकासक्रम विकास
जागृति क्रम जागृति

प्रश्न 9 - परमाणु में नाभकीय बल क्या है?

उत्तर - परमाणु में नाभकीय बल मध्यस्थ बल के रूप में रहता है। यही परमाणु में क्रियारत परिवेशीय अंशों का निश्चित अच्छी दूरी से दूर होने की स्थिति में अच्छी दूरी में प्रतिष्ठित करने के रूप में कार्य करता है

इसका नाम मध्यस्थ शक्ति कहा जाता है।
इसी प्रकार जब परिवेशीय अंश निश्चित अच्छी
दूरी से समीप होते हैं तब पुनश्च निश्चित
अच्छी दूरी में स्थापित कर लेता है यह
भी मध्यस्थ शक्ति के रूप में प्रयोजित होता
हुआ समझ में आता है।

प्रश्न 10- बल एवं शक्ति को कैसे समझा (देखा)
जाय?
उत्तर- परावर्तन में शक्ति, प्रत्यावर्तन में बलों को
पहचाना जाए। यह अध्ययन का
प्रधान बिंदु होगा।
आपने देशपाल एवं अशोक के
उद्गार का उल्लेख किया है साथ में आप
अपने स्वीकृतियों को व्यक्त किया है।
इसमें हम सहमत हैं। पुनश्च शुभाशीष

नागराज

अमरकंटक
15.5.2001

आयुष्मान प्रवीण
शुभ स्मरण
आपका पत्र मिला। जवाब प्रस्तुत है।
प्र० 1 "चैतन्य जड़ से बना नहीं है, विकसित हुआ है।"
बार बार आप अपनी किताब में लिखते हैं कि
"गठनपूर्णता के अनन्तर ....." इससे ऐसा
लगता है जैसे गठनशील परमाणु ही गठनपूर्ण
हुआ (जीवन बना) परंतु आप कहते हैं कि जड़ और
चैतन्य परमाणु दोनों हमेशा से ही थे, हमेशा
रहेंगे। फिर यह "विकास" शब्द इस्तेमाल करने का
क्या तात्पर्य है? संक्षिप्त में विकास की अवधारणा
और उपरोक्त को clarify करें। आपने एक जगह
यह भी कहा है कि जड़ परमाणु चैतन्य में
संक्रमित हो जाता है। संक्रमित = ?
उत्तर 1 मानव व्यवहार दर्शन में जड़ चैतन्य की चर्चा
करते हुए परमाणु में विकास के नाम से अवधारणाओं
को प्रस्तुत किया है उनमें इस बात को स्पष्ट किया
है कि विकासक्रम, विकास हम मानव को समझ में
आता है। विकसित परमाणु के अर्थ में जीवन क्रियाकलाप
प्रमाणित है। विकासक्रम में रासायनिक भौतिक क्रियाकलाप
प्रमाणित है। पुनः प्रश्न करना मानव सहज है कि

जड़ ही चैतन्य हुआ है? इसका उत्तर यही है ऊपर लिखे अनुसार होने का अध्ययन करते हैं। अध्ययन का स्वरूप स्पष्ट है और आगे जड़ चैतन्य हुआ है? कब? कैसा? इसका उत्तर देश काल की सीमा में आता नहीं है। पुनश्च हम "है" के पास में आते हैं तब विकास और विकास क्रम को जोड़कर देखने से पता लगता है और कह सकते हैं जड़ ही चैतन्य हुआ है इस बात का उल्लेख किताबों में भले प्रकार से किया गया है यह घटना विकासपूर्वक ही घटित रहना पाया जाता है। अब विकास को घटित करने के लिए मानव में प्रवृत्ति होती ही है। इसके लिए पुनश्च प्रयोग विधि ही सामने आ सकती है। इसके लिए अपने पास जो साधन है वह यंत्र ही है यंत्र मानव से रचित है जो यंत्र जिससे बना होता है वह उससे अधिक होता नहीं है अपितु वही वस्तु होता है। मानव जितने भी यंत्रों का घटना घटित कर पाया है वह सब भौतिक संसार की सीमा में है।

प्राण संसार के लिए जो प्रयोग हुए हैं उसका बीजरूप वनस्पति संसार से ही प्राप्त किया रहना देखा गया है। इसी के साथ यह भी सच्चाई देखा गया है कि अस्तित्व देश काल की सीमाओं में व्याख्या नहीं हो पाती। इसका व्याख्या सर्वदेश - सर्वकाल के आधार पर ही है। इसके अनंतर पुनः याद में लाना आवश्यक होगा देश और काल के आधार पर घटना को पहचानने के क्रम में किसी वस्तु का सच्चाई समझ में नहीं आती। सर्वदेश - सर्वकाल के आधार पर सम्पूर्ण वस्तुओं का सच्चाई समझ में आता है। इस विधि से हम यह निष्कर्ष में आता है कि विकास, विकासक्रम से जुड़ी हुई है यह कब जुड़ी यह प्रश्न होने पर यह देश काल निबद्ध हो जाती है। अतएव इस मुद्दे को अस्तित्व सहज नित्य वर्तमानात्मक सत्य के रूप में स्वीकारना ठीक होगा।

प्र. २. "अस्तित्व स्वयं संपूर्ण भाव होने के कारण प्रत्येक इकाई में भाव सम्पन्नता देखने को मिलती है। मूलतः अस्तित्व ही परम भाव होने के कारण अस्तित्व ही परमधर्म हुआ।"

भाव = ? (केवल मौलिकता कहकर मत निकल जाइएगा !!)

भाव सम्पन्नता = ?

ऐसी क्या भाव सम्पन्नता देखने को मिलती है?

उत्तर 2 यह सब बात का उत्तर उसी किताब में है जिस किताब से आप लिख रहे हो।

सूत्ररूप में भाव = मौलिकता = स्वभाव

अस्तित्व में व्यापक वस्तु में संपूर्ण 1-1 वस्तु होने के कारण संपूर्ण भाव कहा गया। व्यापक वस्तु पारगामी पारदर्शी स्वभाव संपन्न है वह भी नित्य संपन्न है। प्रत्येक 1-1 वस्तु को 4 अवस्था में स्पष्ट करते हुए- पदार्थावस्था में संगठन विघटन, प्राणावस्था में सारक मारक स्वभाव, जीवावस्था में क्रूर अक्रूर स्वभाव और ज्ञानावस्था में मानव में धीरता, वीरता उदारता, दया कृपा करुणा स्वभाव होना स्पष्ट किया गया है कृपया उस पर भी ध्यान दो कि ही प्रश्न को बार-बार पूछने से मुक्ति मिलेगी।

प्र०3. यह मूल्य जो है जो अर्थ है किसी चीज में वह वस्तु रूप में क्या है?

हम जो समझते हैं यानि हमारी समझ वस्तुरूप में क्या है?

उ०3 वस्तु रूप में उपयोगिता ही मूल्य है। मानव अपने उपयोगिता के साथ, सदुपयोगिता, प्रयोजनशीलता को प्रमाणित करने योग्य है।

समझ = ज्ञान, विवेक, विज्ञान। जिसके आधार पर योजना, कार्य योजना होना पाया गया है।

प्र०4 "अस्तित्व सहअस्तित्व होने के कारण पूरकता और पहचान नित्य सिद्ध होती है।"

कैसी पूरकता? कैसी पहचान? किनके बीच में? अस्तित्व सिद्ध हो रहा है?

उत्तर 4 दो अंशों (परमाणु अंशों) के बीच में पहचान होता है तभी परमाणु के रूप में कार्य करते हुए देखने को मिलता है। यही पहचान का स्वरूप है और व्यवस्था में होना और परमाणु में ही निश्चित आचरण होना. पहचान व्यवस्था के लिए पूरक हुआ। व्यवस्थित इकाइयों के परस्परता में विकासक्रम, विकास के रूप में पूरकता और पहचान होना पाया गया। इसी विधि से विकास भी पहचान और पूरकता के आधार पर ही घटित होना पाया जाता है। इसी क्रम में मानव अपने मानवत्व के साथ पहचान होने के उपरान्त परस्परता में पूरकता प्रमाणित होना देखा जाता है। यह सबके लिए गम्य है।

प्र०5 "गठनपूर्णता के अनन्तर परमाणु अपनी गति में होता है जो स्वयं में एक गतिपथ स्थापित करता है। जबकि जड़ परमाणु में परमाणु अंशों का गतिपथ स्वयं उसके गठन की गठनतंत्रता पर्यन्त प्रकाशित करता है।"

"... स्वयं में एक पुंज रूप में प्रकाशित होता है।" यह विस्तार से समझाइए?

पुंज = ? यह हम जैसे साधारण मानव

कैसे देखेंगे? आपने तो अपने T.V. में देख लिया।
इसकी उपयोगिता क्या है?
यह कहना क्या चाह रहे हैं आप?
प्रकाशित होने का क्या मतलब होता है?
संप्रेषणा का क्या मतलब होता है?

उत्तर 5 प्रकाशित होने का अर्थ स्वयं की पहचान प्रस्तुत करना। कार्य गतिपथ (पुंजाकार) का मतलब - जीवन भी एक परमाणु होते हुए उसके कम्पनात्मक गति, वर्तुलात्मक गति से अधिक होने के कारण आशानुरूपी कार्य गतिपथ को स्थापित करने के यथार्थ को स्पष्ट किया है। आशा = जीने की आशा।

प्रश्न 6 "विकास का लक्ष्य सत्ता में संपृक्त प्रकृति का सत्ता में अनुरत होने से है।"
मुझे लगता है यह बड़ी important बात है।
पर आपने इसे "समाधानात्मक भौतिकवाद" में ना ही Bold अक्षरों में छापा है, ना ही कुछ इसके उपर और बोला है।
इसका क्या मतलब है - विकास और ... के परिपेक्ष में इसे विस्तार से बतायें।
सत्ता से अनुरत होना = ?

उत्तर 6 सत्ता में अनुरत होने का अर्थ है जागृति। इस जागृति को इस प्रकार से अनुभव किया गया है - मन, वृत्ति में, वृत्ति चित्त में, चित्त बुद्धि में, बुद्धि आत्मा में, आत्मा सहअस्तित्व रूपी अस्तित्व में अनुरत होता है। इस विधि से, प्रकारान्तर से ये सभी बाते लेख के रूप में आ चुकी है।

प्रश्न 7 संचेतना क्या है?
उत्तर 7 संज्ञानीयता और संवेदनीयता का संयुक्त नाम है - संचेतना।
परिभाषा है - पूर्णता के अर्थ में चेतना (जागृति)

प्रश्न 8 जड़ शक्तियां क्षरणशील होती है और चैतन्य शक्ति अक्षय। परंतु जड़ परमाणु भी तो निरंतर क्रियाशील है - फिर यह कहने का क्या तात्पर्य है?
उत्तर 8 जड़ परमाणु के अंशो का प्रस्थापन विस्थापन होता है, चैतन्य में नहीं होता है। प्र. 6 चैतन्य परमाणु में ही अक्षय शक्तियां होने के कारण प्रत्येक इकाई अपने में जीवन वैभव और महिमा का अनवरत प्रकाशन करती है।"

उपरोक्त में वैभव और महिमा का अर्थ समझाइए।

उत्तर 9 कल्पनाशीलता और कर्म स्वतंत्रता का तृप्ति बिंदु "वैभव" है। कर्म स्वतंत्रता का तृप्ति बिंदु को स्वानुशासन, कल्पनाशीलता का तृप्ति बिंदु को स्वराज्य व्यवस्था में भागीदारी के रूप में स्पष्ट किया है। प्रमाणित करना ही महिमा है।

प्र० 10 कार्य ऊर्जा क्या है? सम विषम आवेश में यह समता, विषमता किसके सापेक्ष है?

उत्तर 10 कार्य ऊर्जा का मतलब, कार्य के फल परिणाम से है। कार्य के प्रभाव से है। प्रभाव के आधार पर ही फल परिणाम होना पाया जाता है।

प्रभाव के बारे में चर्चा हो चुकी है प्रभाव वश ही सृजन विसर्जन व पालन क्रियाएं सम्पन्न होते हैं। सृजन को प्रमाणित करने के विषय स्थिति में, विसर्जन की स्थिति में विषम र बनाए रखने की स्थिति में मध्यस्थ नाम दिया है।

प्रश्न 11 "स्वभाव हर इकाई में मूल्यों के रूप में वर्तता है।"

"मूल्य प्रत्येक इकाई में स्थिर होता है।"

इन दोनों को एवं (रेखांकित शब्दों को) समझाइए।

उत्तर 11 वर्तने का मतलब है- वर्तमान रहना। स्थिरता का मतलब है- निरंतर रहना।

जबकि वर्तमान और निरंतरता एक ही अर्थ को स्पष्ट करता है। इसका तात्विक विवेचना यही है- होना और कार्यशील रहना।

होने के तात्पर्य में यथास्थिति स्पष्ट किया गया है। यथास्थितियां - आगृति क्रम, जागृति, विकास क्रम विकास के रूप में पहचाना गया है।

प्र० 12 आपने एक जगह लिखा है "समविषमात्मक आवेश समस्या का ही प्रकाशन है।" क्या सम आवेश भी ऐसा है? सम आवेश है क्या?

आगे आप कहते हैं "संपूर्ण प्रकृति स्थिति में स्वभाव - गति - प्रतिष्ठा में ही रहती है जो - महयस्थ क्रिया "आत्मा" के अनुशासन में होने वाली क्रिया है।" इसे स्पष्ट करें।

उत्तर 12 समविषात्मक आवेश का अर्थ है —
आवेश पूर्वक जितने भी सम विषम कार्य करते हैं समात्मक आवेश में एक सर्जन के लिए दूसरे विनाश होने से है इसका अर्थ यह हुआ —
सह अस्तित्व पूर्वक पूरकता विधि से जितने भी सृजन कार्य किए जाते है, वे सब स्वभावगति सहज सम क्रिया के रूप में पहचाना जाता है अन्यथा आवेश है।

ऊपर कहे अनुसार स्पष्ट हो गई कि मध्यस्थ क्रिया अर्थात अनुभवमूलक विधि से कितने भी सृजन कार्य करेंगे वह सब मध्यस्थ क्रिया के अनुरूप होंगे। इससे यह भी एक विराट स्वरूप स्पष्ट होती है, विकासक्रम विकास जागृतिक्रम जागृति अनेकानेक स्थिति हो जाते हैं। उन उन यथास्थिति में वर्तमानित रहना ही स्वभावगति का मतलब है। इसलिये पूरकता सिद्ध होती है

———

राष्ट्रीयता: एक आवश्यकता

1 जनवरी 2002 (Page 1)

~~राष्ट्र और राष्ट्र~~

बहुत दिनों से राष्ट्रीयता का नाम सुनने को मिलता है। वर्तमान में भी ख्याति होता है। ख्याति का मतलब राष्ट्रीयता का प्रमाण देते। क्या अभी तक मानव कुल को समझ में आया है?

देश और देशवासीयों की संस्कृति और मान्यताओं पर आधारित नित्य नैमित्य कार्यक्रमों के एकरूपता पर सोचते तक रूपरेखा तैयार कर पाये। इसमें यह भी समाहित थी देशगत अथवा देशसीमावर्ती क्षेत्र में निवास करने वाले उक्त सभी मुद्दे में एक-मत होने में अपेक्षा रखी हुई है। अथवा अपेक्षा करते आए। क्या ये सब मिल पाये? ऐसा विचार करने पर, सोचने पर, ढूंढने पर यह नहीं मिला। तब राष्ट्रीयता क्या ~~है~~ ~~हुआ~~ हुआ? क्या हो? यह प्रश्न चिन्ह बनता है।

उक्त रूपरेखा तैयार होने पहले का भी वर्तमान के में हम कल्पना के रूप में यह महसूस कर सकते हैं कि आदि मानव युग से भी रंग, नस्ल, भाषा के आधार पर अपना-पराया का दीवाल बनता रहा, संघर्ष होता ही रहा। यह किसका [illegible]। क्या आज रंग, नस्ल, भाषा के आधार पर राष्ट्रीयता का कल्पना किया जा सकता है? ऐसा भी सोचने पर यही निकलता है नहीं निकल सकता है। ये सब के चलते भारत में जब आजादी का दिन और संविधान का स्थापना हुई, मुख्य रूप से सत्ता हस्तांतरण होने का संविधान, संविधान

www.madhyasth.org